International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

शिक्षा का दलित चेतना के विकास में योगदान और महत्व

डॉ शशांक .कुमार[1], दानवीर गौतम[2]

[1] प्राचार्य, डॉ .शमीम गर्ल्स डिग्री कॉलेज, बंगरा, सातनपुरवा, अमेठी
[2]असि० प्रोफेसर , विशेष शिक्षा संकाय, डॉ . शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय , लखनऊ

सारांश

भारत जैसे विविध जातीय संरचना वाले समाज में शिक्षा ने दलित चेतना को विकसित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऐतिहासिक रूप से जातिगत भेदभाव के कारण दलित समुदाय को शिक्षा से दूर रखा गया, जिससे वे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से पिछड़ गए। डॉ भीमराव अंबेडकर जैसे महान विचारकों ने शिक्षा को दलितों के . त्मसम्मान और अधिकारों की प्राप्ति का प्रमुख साधन बताया। शिक्षा ने न केवल उन्हें अक्षरज्ञान प्रदान किया, बल्कि सामाजिक अन्याय के प्रति सजगता, आत्मसम्मान की भावना और संघर्ष की प्रेरणा भी दी। आज दलित चेतना का प्रभाव विश्वविद्यालयों, साहित्यिक रचनाओं, राजनीतिक भागीदारी, मीडिया और सामाजिक आंदोलनों में प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होता है। शिक्षा ने दलित समुदाय को आत्मनिर्भर बनाने के साथ साथ उन्हें समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का-कार्य भी किया है। यह चेतना अब समता, समावेश और न्याय की स्थापना के लिए सक्रिय रूप से कार्य कर रही है। डिजिटल युग और आरक्षण व्यवस्था ने भी इस चेतना को नई दिशा और बल प्रदान किया है। अतः शिक्षा न केवल ज्ञान का माध्यम है, बल्कि वह दलित चेतना की लौ है, जो समतामूलक समाज के निर्माण में आधारशिला सिद्ध हो रही है।

शब्द कुंजी: *दलित चेतना, सामाजिक न्याय, डॉ. भीमराव अंबेडकर, शिक्षा और सशक्तिकरण, सामाजिक समावेशन आदि।*

भूमिका

भारत का सामाजिक ढांचा ऐतिहासिक रूप से जाति आधारित रहा है, जिसमें दलित समुदाय को सदियों तक शोषण, भेदभाव और सामाजिक बहिष्करण का सामना करना पड़ा। इस व्यवस्था ने दलितों को शैक्षणिक अवसरों से भी वंचित रखा, जिससे उनके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विकास में गंभीर बाधाएँ उत्पन्न हुईं (Omvedt, 1994)। जाति व्यवस्था की यह जड़ता न केवल दलितों की संभावनाओं को सीमित करती रही, बल्कि उनके आत्मसम्मान और पहचान को भी दबाने का कार्य करती रही। शिक्षा इस स्थिति को बदलने का सबसे प्रभावशाली साधन बनी है। यह केवल ज्ञान प्रदान करने का माध्यम नहीं, बल्कि एक सशक्त सामाजिक औजार है जो शोषण के विरुद्ध चेतना और प्रतिरोध का निर्माण करता है (Freire, 1970)। भारत में दलित चेतना के विकास में शिक्षा ने जागरूकता, आत्म-गौरव और संगठन के बीज बोए हैं, जिससे यह समुदाय अब अपने अधिकारों के लिए मुखर होकर संघर्ष कर रहा है।

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने शिक्षा को दलित मुक्ति का मूल अस्त्र माना और कहा, "शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो।" उन्होंने स्वयं अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि शिक्षा दलितों को सामाजिक शृंखला से मुक्त कर सकती है (Zelliot, 2005)। अंबेडकर के प्रभाव से प्रेरित होकर दलित समुदाय में शिक्षा के प्रति रुझान बढ़ा, जिससे नई पीढ़ी में आत्मविश्वास और पहचान की भावना विकसित हुई। शिक्षा ने दलितों को साक्षरता तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्हें सामाजिक व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाने और परिवर्तन की दिशा में सक्रिय भूमिका निभाने के योग्य बनाया। आज दलित लेखक, शिक्षाविद, नेता और सामाजिक कार्यकर्ता जिस साहस और स्पष्टता से असमानता के विरुद्ध आवाज़ उठा रहे हैं, उसका मूल आधार शिक्षा ही है (Guru, 2009)। विशेष रूप से उच्च शिक्षा संस्थानों में दलित विद्यार्थियों की भागीदारी और उनके अनुभवों ने नई चेतना को जन्म दिया है, जो अब समता और न्याय की दिशा में सामाजिक विमर्श को प्रभावित कर रही है।

वर्तमान में डिजिटल युग, सरकारी नीतियाँ और आरक्षण व्यवस्था ने दलित शिक्षा को एक नई दिशा और गति दी है। तकनीकी संसाधनों और ऑनलाइन शिक्षा ने दलित विद्यार्थियों को वैश्विक स्तर पर संवाद करने और अपनी बात रखने के अवसर प्रदान किए हैं। हालाँकि, अभी भी सामाजिक पूर्वाग्रह, संस्थागत भेदभाव और संसाधनों की असमान उपलब्धता जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं (Thorat & Newman, 2010)। फिर भी, शिक्षा का प्रभाव यह है कि अब दलित समुदाय सामाजिक बदलाव के लिए संगठित हो रहा है, और विभिन्न आंदोलनों में उसकी सक्रिय भूमिका दिखाई दे रही है। शिक्षा ने दलित चेतना को वैचारिक स्पष्टता, सामाजिक भागीदारी और आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर किया है, जो भारत को एक समतामूलक समाज बनाने के लिए आवश्यक है।

शिक्षा के माध्यम से दलित चेतना का प्रसार केवल व्यक्तिगत मुक्ति तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह एक सामूहिक आंदोलन का रूप ले चुका है। शिक्षा प्राप्त दलित युवा अब न केवल स्वयं को सशक्त बना रहे हैं, बल्कि अपने समुदाय के अंदर सामाजिक जागरूकता और संगठन की भावना को भी बढ़ावा दे रहे हैं (Teltumbde, 2010)। विश्वविद्यालय परिसरों में दलित छात्र संघ, विमर्श समूह और साहित्यिक मंचों ने जातिवादी सोच को चुनौती दी है और समावेशी नीतियों की माँग को तेज किया है। दलित साहित्य, जिसे "अनुभव की सच्चाई" कहा गया है, ने इस चेतना को वैचारिक और भावनात्मक आधार प्रदान किया है, जहाँ शिक्षा प्राप्त रचनाकारों ने शोषण, अपमान और संघर्ष की जीवंत अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है (Kumar, 2011)। इसके साथ ही शिक्षा ने दलित महिलाओं को भी सशक्त किया है, जो अब दोहरी (जाति और लिंग आधारित) पितृसत्ता के विरुद्ध अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। शिक्षा के इस बहुआयामी प्रभाव ने दलित चेतना को एक सशक्त सामाजिक आंदोलन में परिवर्तित कर दिया है, जो अब न केवल अधिकार की बात करता है, बल्कि नेतृत्व की भूमिका भी निभा रहा है।

Omvedt, (1994), गेल ओमवेट अपनी प्रसिद्ध कृति *Dalits and the Democratic Revolution* (1994) में दलित चेतना के सामाजिक-राजनीतिक विकास और उसमें शिक्षा की भूमिका को गहराई से विश्लेषित करती हैं। वह बताती हैं कि भारत में दलितों के सामाजिक उत्थान की प्रक्रिया में शिक्षा एक क्रांतिकारी औजार के रूप में उभरी है। पारंपरिक जातीय व्यवस्था में दलित समुदाय को जानबूझकर शिक्षा से वंचित रखा गया, जिससे उन्हें न केवल आर्थिक बल्कि राजनीतिक

भागीदारी से भी बाहर रखा गया। परंतु अंबेडकरवादी आंदोलन ने इस मानसिकता को चुनौती दी और शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का हथियार बनाया।

ओमवेट के अनुसार, डॉ. भीमराव अंबेडकर स्वयं इस विचार के उदाहरण थे कि शिक्षा के माध्यम से दलित समाज आत्म-सम्मान, स्वाधीनता और न्याय की ओर बढ़ सकता है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति से पूर्व बौद्धिक और शैक्षणिक जागरण आवश्यक है। अंबेडकर ने दलित समाज को "शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो" का संदेश दिया, जिसे ओमवेट एक ऐतिहासिक घोषवाक्य मानती हैं।

Freire P., (1970), एक वैश्विक स्तर पर चर्चित शैक्षणिक दार्शनिक कृति है, जिसमें उन्होंने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और उत्पीड़ित वर्गों की मुक्ति का सशक्त माध्यम माना है। फ्रेरे का मानना था कि पारंपरिक शिक्षा प्रणाली एक "बैंकिंग मॉडल" है, जिसमें शिक्षक ज्ञान का भंडार होते हैं और विद्यार्थी केवल निष्क्रिय रूप से उसे ग्रहण करते हैं। वह इस प्रणाली को असमानता बनाए रखने वाली व्यवस्था मानते हैं। इसके विपरीत, वे "संकलनात्मक शिक्षा" (Problem-posing education) का पक्ष लेते हैं, जो संवाद, चेतना और परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। फ्रेरे के विचार भारतीय संदर्भ, विशेष रूप से दलित शिक्षा आंदोलन से गहराई से मेल खाते हैं। भारत में जाति आधारित उत्पीड़न और भेदभाव की पृष्ठभूमि में फ्रेरे की अवधारणाएँ अत्यंत प्रासंगिक हैं। दलित समुदाय के लिए शिक्षा केवल जानकारी अर्जित करने का माध्यम नहीं रही, बल्कि यह आत्म-जागरूकता, आत्मसम्मान और सामाजिक असमानता के विरुद्ध संघर्ष का औजार बनी है। फ्रेरे के अनुसार, उत्पीड़ित तब तक मुक्त नहीं हो सकते जब तक वे अपनी स्थिति को समझ कर उसके विरुद्ध सक्रिय नहीं होते — यही विचार दलित चेतना के मूल में है। इस दृष्टिकोण से *Pedagogy of the Oppressed* दलित शिक्षा आंदोलन के वैचारिक आधारों को सुदृढ़ करता है और उन्हें वैश्विक वैधता प्रदान करता है।

Zelliot, (2005), एलिनर ज़ेलियट ने अपनी चर्चित कृति *From Untouchable to Dalit* (2005) में डॉ. भीमराव अंबेडकर के प्रयासों के माध्यम से शिक्षा को दलित चेतना के जागरण का मूल आधार बताया है। वे यह तर्क प्रस्तुत करती हैं कि अंबेडकर ने न केवल शिक्षा प्राप्त कर सामाजिक सीढ़ियाँ चढ़ीं, बल्कि उन्होंने पूरे दलित समुदाय को यह संदेश दिया कि मुक्ति का पहला कदम ज्ञान है। ज़ेलियट के अनुसार, अंबेडकर के नेतृत्व में शिक्षा एक व्यक्तिगत उन्नति का माध्यम न रहकर सामूहिक जागरूकता और सामाजिक क्रांति का औजार बन गई। उन्होंने दलित समाज में यह सोच विकसित की कि शिक्षा केवल नौकरी पाने के लिए नहीं, बल्कि शोषण के विरुद्ध विचार और प्रतिरोध की शक्ति उत्पन्न करने के लिए आवश्यक है। ज़ेलियट यह भी रेखांकित करती हैं कि अंबेडकर द्वारा स्थापित संस्थाएँ और उनके शैक्षिक आंदोलन ने दलितों में आत्मगौरव, नेतृत्व क्षमता और संगठित चेतना का संचार किया। उनके विचार में, "अछूत" से "दलित" बनने की प्रक्रिया में शिक्षा ही वह धुरी रही, जिसने पहचान, आत्मसम्मान और समानता की चेतना को जन्म दिया। इस प्रकार, ज़ेलियट की पुस्तक शिक्षा और दलित चेतना के अंतर्संबंध को ऐतिहासिक और वैचारिक संदर्भ में स्पष्ट करती है।

Thorat & Newman, (2010), थोराट और न्यूमैन की पुस्तक *Blocked by Caste* (2010) आधुनिक भारत में जाति आधारित आर्थिक और शैक्षणिक भेदभाव के वास्तविक स्वरूप को उजागर करती है। विशेष रूप से यह पुस्तक उच्च शिक्षा संस्थानों में दलित छात्रों के साथ होने वाले संस्थागत भेदभाव पर ध्यान केंद्रित करती है। लेखकों का निष्कर्ष है कि यद्यपि संविधानिक आरक्षण नीतियों और शैक्षणिक अवसरों में वृद्धि के कारण दलित विद्यार्थी विश्वविद्यालयों तक पहुँच तो पा

रहे हैं, लेकिन वहाँ उन्हें बराबरी का दर्जा नहीं मिल पाता। उन्हें अकादमिक उपेक्षा, सामाजिक अलगाव, मानसिक उत्पीड़न, और कभी-कभी खुले भेदभाव का सामना करना पड़ता है। इससे न केवल उनके आत्मविश्वास पर प्रभाव पड़ता है, बल्कि उनकी शैक्षणिक प्रगति और मानसिक स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। थोराट और न्यूमैन इस बात को रेखांकित करते हैं कि जब तक संस्थागत स्तर पर संवेदनशीलता और समावेशन की नीतियाँ प्रभावी रूप से लागू नहीं की जातीं, तब तक शिक्षा दलितों के लिए मुक्ति का पूरा माध्यम नहीं बन सकती। इस संदर्भ में यह पुस्तक यह स्पष्ट करती है कि शिक्षा तक पहुँच पर्याप्त नहीं है; उसमें गरिमा, समानता और स्वीकृति का माहौल भी उतना ही आवश्यक है।

दलित चेतना का इतिहास

1. **प्राचीन व मध्यकालीन संदर्भ:** भारत की सामाजिक संरचना सदियों से जाति व्यवस्था पर आधारित रही है, जिसमें श्रम के आधार पर समाज को वर्गीकृत किया गया। इस व्यवस्था के सबसे निचले पायदान पर जिन्हें "अस्पृश्य" या "शूद्र" कहा गया, उन्हें शिक्षा, मंदिर प्रवेश, जल स्रोतों के उपयोग और सामाजिक सहभागिता से वंचित रखा गया। मनुस्मृति जैसे धर्मग्रंथों ने इस असमानता को धार्मिक आधार देकर और भी कठोर बना दिया। प्राचीन गुरुकुल प्रणाली केवल उच्च वर्णों तक सीमित रही, जिससे दलित समुदाय शिक्षा से दूर ही रहा। मध्यकाल में भी स्थिति में विशेष सुधार नहीं हुआ। भक्ति आंदोलन के दौरान कुछ संत जैसे कबीर, रैदास, और चोखामेला ने जातिवादी सोच का विरोध किया और समानता का संदेश दिया, लेकिन इन आंदोलनों का प्रभाव सीमित रहा। दलित चेतना का कोई व्यवस्थित रूप उस समय तक नहीं बन पाया था, क्योंकि उस युग में न तो शिक्षा व्यापक थी और न ही दलितों को सामाजिक नेतृत्व की भूमिका दी जाती थी।
2. **डॉ. अंबेडकर और आधुनिक चेतना:** बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में डॉ. भीमराव अंबेडकर ने दलित चेतना को वैचारिक, संगठनात्मक और क्रांतिकारी आधार प्रदान किया। वे पहले ऐसे दलित नेता थे जिन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त कर सामाजिक असमानता के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल बजाया। अंबेडकर ने दलितों से आह्वान किया कि वे शिक्षित बनें, संगठित रहें और अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करें। उनका मानना था कि शिक्षा वह शक्ति है जो न केवल व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाती है, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन का वाहक भी बनाती है। उन्होंने विभिन्न आयोगों, आंदोलनों और संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से दलित अधिकारों को संस्थागत आधार देने का कार्य किया। उनके नेतृत्व में दलित चेतना केवल अपमान और शोषण के विरुद्ध प्रतिक्रिया न रहकर, एक वैचारिक और न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था की मांग बन गई। अंबेडकर की दृष्टि में शिक्षा दलित समाज के नव निर्माण का औजार थी, जिसने आगे चलकर अनेक संगठनों और आंदोलनों को प्रेरित किया।
3. **सामाजिक आंदोलनों में शिक्षा की भूमिका:** स्वतंत्रता के पश्चात भारत में सामाजिक न्याय, आरक्षण नीति और शिक्षा के क्षेत्र में विस्तार ने दलित चेतना को गति दी। अनेक राज्यों में दलित संगठनों, छात्र संघों और सामाजिक आंदोलनों का उदय हुआ, जो शिक्षा को आत्म-सशक्तिकरण का माध्यम मानते थे। दलित पैंथर्स आंदोलन (1970 के दशक) ने दलितों के सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों के साथ-साथ शिक्षा को केंद्र में रखते हुए आवाज उठाई। विश्वविद्यालयों में दलित छात्रों की संख्या बढ़ी, जिससे दलित विमर्श को बौद्धिक स्वर मिला। दलित साहित्य,

पत्रकारिता, और शैक्षणिक संस्थानों में सक्रिय भागीदारी से यह स्पष्ट हुआ कि शिक्षा ने दलित चेतना को संगठित, विश्लेषणात्मक और मुखर बनाया है। आज के डिजिटल युग में भी शिक्षा दलित समुदाय को वैश्विक मंचों तक पहुंचा रही है, जहाँ वे अपनी पहचान, अधिकार और सामाजिक न्याय की मांग को प्रखरता से रख रहे हैं। इस प्रकार, शिक्षा ने न केवल दलित चेतना को इतिहास से जोड़ा है, बल्कि उसे भविष्य की दिशा भी प्रदान की है।

शिक्षादलित मुक्ति का औजार :

1. **अंबेडकर का शैक्षिक दर्शन:** डॉ. भीमराव अंबेडकर का शैक्षिक दर्शन दलित मुक्ति आंदोलन की आधारशिला है। उन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञान प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति और आत्ममुक्ति का औजार माना। अंबेडकर का मानना था कि जब तक दलित समुदाय शिक्षित नहीं होगा, तब तक वह न तो सामाजिक असमानताओं को पहचान सकेगा और न ही उनके विरुद्ध संघर्ष कर सकेगा। उन्होंने स्वयं अपने जीवन में शिक्षा के माध्यम से अस्पृश्यता, अपमान और जातिगत बंधनों को तोड़ते हुए यह सिद्ध किया कि शिक्षा शोषण की दीवारों को गिराने की ताकत रखती है। अंबेडकर ने दलित समाज को संगठित करने, उनमें आत्मविश्वास पैदा करने और लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रति सजग बनाने के लिए शिक्षा को केंद्रीय भूमिका दी। उनके द्वारा स्थापित संस्थान, जैसे सिद्धार्थ कॉलेज और डॉ. आंबेडकर महाविद्यालय, दलितों को उच्च शिक्षा में अवसर देने की दिशा में क्रांतिकारी प्रयास थे। उनका शैक्षिक दर्शन इस विचार पर आधारित था कि सामाजिक परिवर्तन का आधार वैचारिक क्रांति है, और वैचारिक क्रांति की शुरुआत शिक्षा से ही होती है।
2. **'शिक्षित बनो' का महत्व:** अंबेडकर का प्रसिद्ध नारा – "शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो" – केवल एक प्रेरक वाक्य नहीं, बल्कि दलित चेतना का मूलमंत्र बन गया है। 'शिक्षित बनो' का अर्थ सिर्फ स्कूली या डिग्री की पढ़ाई तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका उद्देश्य सामाजिक यथार्थ को समझना, अपनी स्थिति का विश्लेषण करना और अन्याय के विरुद्ध संगठित होकर लड़ना है। अंबेडकर ने इस नारे के माध्यम से यह संदेश दिया कि दलित समाज को अपने अधिकारों के लिए सबसे पहले ज्ञान से लैस होना होगा। शिक्षा न केवल रोजगार का माध्यम है, बल्कि यह व्यक्ति में आत्मचिंतन, आत्मगौरव और समाज में अपने स्थान को समझने की दृष्टि देती है। 'शिक्षित बनो' एक वैचारिक आंदोलन है, जिसने दलित युवाओं को सामाजिक न्याय, संवैधानिक अधिकारों और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति जागरूक किया। इस नारे के प्रभाव से कई सामाजिक आंदोलन, दलित साहित्य और छात्र संगठनों ने जन्म लिया, जिन्होंने दलितों के जीवन को नई दिशा और गति दी।
3. **शिक्षा से आत्म-सम्मान और अधिकार जागरूकता:** शिक्षा के माध्यम से दलित समाज में आत्म-सम्मान और अधिकारों की जागरूकता का विस्तार हुआ है। जिन समुदायों को सदियों तक हीन भावना में रखा गया था, वे अब शिक्षा के माध्यम से अपने अस्तित्व और अधिकारों के प्रति सजग हुए हैं। यह आत्म-सम्मान केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना का रूप ले चुका है। आज दलित विद्यार्थी विश्वविद्यालयों में न केवल अध्ययनरत हैं, बल्कि वे नेतृत्व कर रहे हैं, वैचारिक विमर्श में भाग ले रहे हैं और नीति-निर्माण में भी अपनी भूमिका निभा रहे हैं। शिक्षा ने दलितों को संविधान,

विधिक अधिकारों, आरक्षण नीति, और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं से जोड़ा है। इससे वे अपने अधिकारों को पहचानकर उनके संरक्षण और विस्तार के लिए संघर्षशील हुए हैं। अब दलित समुदाय केवल पीड़ित नहीं, बल्कि सशक्त, संगठित और विचारशील नागरिक के रूप में उभर रहा है — और इस रूपांतरण की बुनियाद शिक्षा है। अतः शिक्षा निस्संदेह दलित मुक्ति का सबसे प्रभावी औजार सिद्ध हुई है।

उच्च शिक्षा और संस्थागत चुनौतियाँ

1. **आरक्षण और पहुंच :** भारत में संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण व्यवस्था ने दलित समुदाय को उच्च शिक्षा तक पहुँचने का एक महत्वपूर्ण अवसर प्रदान किया है। डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा संरचित यह नीति सामाजिक न्याय और समान अवसर के सिद्धांत पर आधारित है। आरक्षण के कारण दलित विद्यार्थी अब विश्वविद्यालयों और व्यावसायिक संस्थानों में अधिक संख्या में प्रवेश पा रहे हैं। इसके बावजूद, अब भी कई क्षेत्रों में इनकी भागीदारी सीमित है। National Sample Survey (2017-18) के अनुसार, अनुसूचित जातियों का उच्च शिक्षा में नामांकन अनुपात सामान्य वर्ग की तुलना में कम बना हुआ है। इस अंतर का कारण केवल आर्थिक संसाधनों की कमी नहीं है, बल्कि यह संस्थागत संरचना में निहित बाधाओं का भी परिणाम है।
2. **भेदभाव और सामाजिक अलगाव :** भले ही आरक्षण के माध्यम से प्रवेश आसान हुआ हो, परंतु विश्वविद्यालय परिसर में दलित छात्रों को सामाजिक भेदभाव, मानसिक उत्पीड़न, और अस्वीकार्यता का सामना करना पड़ता है। Thorat और Newman (2010) ने अपनी पुस्तक *Blocked by Caste* में विस्तार से बताया है कि कैसे संस्थानों में दलित छात्रों को अकादमिक समर्थन से वंचित किया जाता है, उन्हें असंवेदनशील व्यवहार का सामना करना पड़ता है और उन्हें अलग-थलग महसूस कराया जाता है। यह भेदभाव केवल छात्रों तक सीमित नहीं है, बल्कि फैकल्टी चयन, शोध में अवसर, और छात्रावास आवंटन जैसी व्यवस्थाओं में भी परिलक्षित होता है। इन कारणों से कई बार छात्र उच्च शिक्षा को अधूरा छोड़ने के लिए विवश हो जाते हैं।
3. **समावेशी नीतियों की आवश्यकता :** केवल आरक्षण पर्याप्त नहीं है; शैक्षिक संस्थानों को ऐसे समावेशी वातावरण का निर्माण करना होगा जिसमें दलित छात्रों को बराबरी, गरिमा और समर्थन मिले। Paulo Freire (1970) की *Pedagogy of the Oppressed* इस बात पर बल देती है कि शिक्षा उत्पीड़ित वर्गों को न केवल जानकारी देती है, बल्कि उन्हें मुक्तिदाता बनाती है। इसी दृष्टिकोण से शिक्षा नीति को दलित छात्र हितैषी बनाना आवश्यक है। समावेशी नीतियों में संवेदनशील फैकल्टी प्रशिक्षण, छात्र समर्थन प्रणाली, मेंटरशिप प्रोग्राम, और भेदभाव विरोधी समितियों की सक्रिय भूमिका ज़रूरी है। National Education Policy (NEP) 2020 में इस दिशा में कुछ सकारात्मक संकेत अवश्य हैं, परंतु इनका ठोस क्रियान्वयन आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

डिजिटल शिक्षा और नई संभावनाएँ

1. **ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और जानकारी तक पहुंच:** डिजिटल क्रांति ने शिक्षा के क्षेत्र में एक नया अध्याय शुरू किया है,

विशेष रूप से दलित समुदाय के लिए, जिसे ऐतिहासिक रूप से शैक्षणिक संसाधनों से वंचित रखा गया था। आज इंटरनेट, स्मार्टफोन और ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफॉर्म जैसे—SWAYAM, DIKSHA, NPTEL, और YouTube जैसे माध्यमों से ज्ञान की democratization संभव हो रही है। अब दलित विद्यार्थी शारीरिक दूरी, संस्थागत भेदभाव और आर्थिक बाधाओं के बावजूद भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच बना पा रहे हैं। यह ऑनलाइन उपलब्ध संसाधन न केवल प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में सहायक हैं, बल्कि वैकल्पिक ज्ञान जैसे संविधान, सामाजिक न्याय, और अंबेडकरवादी विचारधारा को भी युवा पीढ़ी तक पहुँचाने में सहायक हैं।

2. **तकनीकी सशक्तिकरण:** डिजिटल शिक्षा सिर्फ पढ़ाई तक सीमित नहीं है, यह तकनीकी सशक्तिकरण का माध्यम भी बन रही है। कंप्यूटर साक्षरता, कोडिंग, डेटा एनालिसिस, डिजिटल मार्केटिंग जैसे क्षेत्रों में दलित युवा तेजी से प्रशिक्षित हो रहे हैं और नई नौकरियों व स्टार्टअप की संभावनाएँ तलाश रहे हैं। सरकार द्वारा चलाए जा रहे *Digital India* मिशन, *PMGDISHA* (Pradhan Mantri Gramin Digital Saksharta Abhiyan) जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण दलित युवाओं को तकनीकी प्रशिक्षण देने में सहयोग किया है। यह सशक्तिकरण दलितों को न केवल आर्थिक रूप से स्वतंत्र बना रहा है, बल्कि डिजिटल मंचों पर अपनी पहचान और आवाज़ स्थापित करने का अवसर भी प्रदान कर रहा है।
3. **ग्रामीण बनाम शहरी परिप्रेक्ष्य:** हालाँकि डिजिटल शिक्षा नई संभावनाओं का द्वार खोल रही है, लेकिन यह भी सत्य है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में इसकी पहुँच और प्रभाव में भारी अंतर है। शहरी दलित विद्यार्थी बेहतर इंटरनेट सुविधा, डिजिटल उपकरण और तकनीकी सहायता प्राप्त कर पाते हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की अनियमित आपूर्ति, नेटवर्क की समस्या, और डिजिटल साक्षरता की कमी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। इन असमानताओं के कारण डिजिटल शिक्षा का लाभ सभी वर्गों तक समान रूप से नहीं पहुँच पा रहा है। इसके समाधान हेतु नीतिगत हस्तक्षेप आवश्यक हैं, जैसे कि डिजिटल डिवाइड को पाटने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में मुफ्त या सस्ती इंटरनेट सुविधा, डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता, और स्थानीय भाषा में पाठ्य सामग्री का विकास।

निष्कर्ष (Conclusion)

भारत जैसे बहुस्तरीय और बहुजातीय समाज में शिक्षा ने दलित चेतना के विकास में एक निर्णायक भूमिका निभाई है। इतिहास गवाह है कि जब तक दलित समुदाय को शिक्षा से वंचित रखा गया, तब तक वे सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से उत्पीड़न के शिकार रहे। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने शिक्षा को दलित मुक्ति का सबसे प्रभावी औजार माना और "शिक्षित बनो" का संदेश देकर सामाजिक क्रांति की आधारशिला रखी। आज शिक्षा के माध्यम से दलित समुदाय में आत्म-सम्मान, अधिकारों के प्रति जागरूकता और न्याय की समझ का विस्तार हुआ है। उच्च शिक्षा संस्थानों में भागीदारी, साहित्यिक अभिव्यक्ति, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और डिजिटल सशक्तिकरण जैसे क्षेत्र शिक्षा की शक्ति को प्रमाणित करते हैं। तथापि, अभी भी संस्थागत भेदभाव, सामाजिक अलगाव और अवसरों की असमानता जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं, जो समतामूलक समाज की स्थापना में बाधक हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि नीतिगत स्तर पर शिक्षा को और अधिक समावेशी और सुलभ बनाया जाए। आरक्षण नीतियों के साथ-साथ पाठ्यक्रम में बहुजन दृष्टिकोण का समावेश, शिक्षक प्रशिक्षण में

संवेदनशीलता और डिजिटल संसाधनों की न्यायपूर्ण पहुँच जैसे उपायों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। साथ ही, ग्रामीण क्षेत्रों में दलित विद्यार्थियों के लिए विशेष योजनाएँ और छात्रवृत्तियाँ भी प्रभावी हों। शिक्षा को केवल औपचारिक डिग्री तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक चेतना, आलोचनात्मक विवेक और आत्मनिर्भरता से जोड़ना ही समतामूलक समाज की दिशा में सार्थक कदम होगा। अतः शिक्षा न केवल दलित चेतना की मशाल है, बल्कि वह सेतु भी है जो सामाजिक न्याय, समान अवसर और गरिमा आधारित समाज की ओर हमें ले जाती है।

संदर्भ (References):

1. फ़्रिरे, पाउलो. (1970). *उत्पीड़ितों की शिक्षा पद्धति*. न्यूयॉर्क: हर्डर एंड हर्डर।
2. गुरु, गगन. (2009). *अपमान: दावे और संदर्भ*, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. ओमवेद्त, गेल. (1994). *दलित और लोकतांत्रिक क्रांति: औपनिवेशिक भारत में डॉ. अंबेडकर और दलित आंदोलन*. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स।
4. थोराट, श्याम व न्यूमैन, केथरीन. (2010). *जाति द्वारा अवरुद्ध: आधुनिक भारत में आर्थिक भेदभाव*। नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. ज़ेलियट, एलिनॉर. (2005). *अस्पृश्य से दलित: अंबेडकर आंदोलन पर निबंध*। नई दिल्ली: मनोहर प्रकाशन।
6. तेलतुंबड़े, आनंद. (2010). *जाति की निरंतरता: खैरलांजी हत्याकांड और भारत का छिपा रंगभेद*। नई दिल्ली: नवायना।
7. कुमार, दीपू. (2011). *दलित साहित्य: एक आलोचनात्मक विश्लेषण*। नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिकेशन्स।
8. ओमवेद्त, गेल. (1994). *दलित और लोकतांत्रिक क्रांति*। नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स।
9. भारत सरकार. (2019). *उच्च शिक्षा पर अखिल भारतीय सर्वेक्षण (AISHE) रिपोर्ट 2017–18*। नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय।
10. देशपांडे, सतीश. (2011). विशेष असमानताएँ: भारतीय उच्च शिक्षा में योग्यता, जाति और भेदभाव। *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 46*(38), 49–58।
11. नाम्बिसन, गीता भार्गव. (2009). स्कूलों में बहिष्करण और भेदभाव: दलित बच्चों के अनुभव। *आईडीएस बुलेटिन, 40*(1), 55–63।
12. भारत सरकार, (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*। नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय।